

डक-पंजीयन नं. 1/भोपाल/4-472/2021-23
पोस्टिंग दिनांक : प्रतिमाह दिनांक 2 से 8, पृष्ठ सं. 194
प्रकाशन दिनांक : 1 से 1 प्रतिमाह

अक्षर

205

साहित्य की मासिकी

मूल्य 25/-

40
ताँ वर्ष

अप्रैल 2022

स्तंभ

रमेश दुबे, कुसुमलता केडिया

आलेख

सममनोहर लोहिया, अरि शेखर
रमेश मिश्र पंकज, मनोज श्रीवास्तव
आदित्य शुक्ल, विनोद शाही
गिरिजा किशोर पाठक, कृष्णगोपाल मिश्र
प्रमोद भार्गव, लक्ष्मीकान्त जयण
मुरलीधर चौदनीवाला, इलाघोष
नीलिमा रमा, शिवचरण चौहान

ललित निबंध

नर्मदाप्रसाद सिरोदिया

रमरणांजलि

सुखंत निरगुण, सुशोभित

अनुवाद

इंद्र चित्रा

कहानी

सर्वेश सिंह, अभिनीकुमार दुबे
अर्पिता शुक्ल, प्रगति गुप्ता
कुसुम रानी नैथानी

कविता

उदयप्रकाश, आभा भारती
अभिजित उपमन्यु, ब्रजरतन जोशी
वैशाल अग्रवाल, देवेश पाथ सास्त्रिया
भास्करा व्यास, नेहा नरुका

गीत/गजल

दिनेश मालवीय 'अरक'
संदिप फराज

अनुक्रम

सम्पादकीय

समय और विचार-24

आधुनिक समय में सार्थक राम/रमेश दवे/9

द्रौपदी स्वयंवर की गाथा/कुसुमलता केडिया/11

स्मृति आलेख

राम, कृष्ण, शिव/ राममनोहर लोहिया/14

आलेख

निर्वासन में स्थानचेतना : कश्मीर में राम/अग्रिशेखर/18

सुंदरकांड में तुलसी की 'सकल ताड़ना' का विज्ञान/मनोज श्रीवास्तव/22

प्रेम के अवतार प्रभु श्री राम/आदित्य शुक्ल/35

युगांतर को समझने की कुंजी हैं हनुमान/विनोद शाही/39

यावत् रामकथा लोके तावत् जीवतु बालकः/गिरिजा किशोर पाठक/44

रामलला काव्य के दर्पण में/कृष्णगोपाल मिश्र/48

रामायणों में विज्ञान/प्रमोद भार्गव/52

जी, रामजी अभी तो घर में हैं/लक्ष्मीकांत जवणे/60

श्रीराम ने जान लिया था दुःख का चरित्र / मुरलीधर चाँदनीवाला/64

वाल्मीकि के राम/इलाघोष/66

राम की शक्ति पूजा में निराला की काव्य-दृष्टि/नीलिमा वर्मा/73

अवधी लोक साहित्य में राम और लोकमंगल की भावना / शिवचरण चौहान/80

महान संत रविदास को प्रताड़ित बताने का अपराध/रामेश्वर मिश्र पंकज/83

ललित निबंध

राम फेरी में राम/नर्मदाप्रसाद सिसोदिया/87

स्मरणांजलि

कंठ का वरदान लता मंगेशकर/ बसंत निरगुणे/92

नाद-स्वर का उत्सव / सुशोभित/95

अनुवाद

अन्दाल्लुर कवु और रामायण / मूल : इंदु चिंता/ अनु. : मनोज श्रीवास्तव/97

कहानी

वायरस/सर्वेश सिंह/101

डैडी, चाचा कब आएँगे/अश्विनीकुमार दुबे/108

अम्मा की डोली/उर्मिला शुक्ल/113

अदृश्य आवाजों का विसर्जन /प्रगति गुप्ता/119

मीठा जहर/ कुसुम रानी नैथानी/124

कविता

बिम्ब/उद्भ्रांत/131

उखड़ती साँसें / आभा भारती/134

दो दुनिया/अमित उपमन्यु/135

पहाड़/ब्रजरतन जोशी/137

पुनर्जीवन/नरेश अग्रवाल/139

दृश्यों का कवि/देवेश पाथ सारिया/141

मुझे उपलब्धि न जानो/भावना व्यास/143

इत्रवाले/नेहा नरुका/144

गीत/गजल

पतझड़ को मधुमास लिखेंगे/दिनेश मालवीय 'अश्क'/147

ढूँढ़ रहे हैं/वाहिद फ़राज़/148

शोध आलेख

लोक साहित्य में गाँधी/अरुण कुमार पांडे/149

चतुर्व्यूह के आलोक में योगसूत्र का दार्शनिक आधार/प्रवेश जाटव/ गणेश शंकर गिरि/153

पारिजात : गंगा जमुनी तहजीब /सिराजुल हक/156

स्थानीय भाषाओं की वर्तमान चुनौतियाँ/अल्पना शर्मा/159

भारत भारती में राष्ट्र भाव की संकल्पना/अजीत कुमार पुरी/165

पुस्तक परिचय

माँ जिंदा है, बारूद का ढेर (राम प्यारे प्रजापति)/ राधारानी चौहान/169

समीक्षा

राम अयन (राजेश श्रीवास्तव)/ गोकुल सोनी/170

राम रावण युद्ध (नीलेश नीलकांत ओक)/ विनीता राहुरीकर/174

संभव होने की अजस्र धारा (पवन माथुर) / हर्षबाला शर्मा/ 176

मराठी से हिंदी शब्द संग्रह(ज. ग. फगरे)/प्रतिभा गुर्जर/178

जो मिले (दामोदर दत्त दीक्षित)/अनीता सक्सेना/179

बूँद तथा अन्य कहानियाँ (ताराचंद मकसाने)/नवीन नंदवाना /180

युगाधिपति (चंद्रप्रकाश जायसवाल) श्याम बिहारी सक्सेना/181

समर्पित सुधियाँ (शरद सिंह)/मैथिली मिलिंद साठे/182

संघर्ष से विजयपथ की ओर : कैलाशचन्द्र पंत (अर्चना निगम) / प्रदीप कुमार/184

रजत श्रृंखला(कांता रॉय)/केतकी/188

पत्रांश/189

चतुर्व्यूह के आलोक में योगसूत्र का दार्शनिक आधार

- प्रवेश जाटव, गणेश शंकर गिरि

मानव जीवन के गूढ़तम रहस्यों को खोजने के लिये तथा जीवन को सार्थक व्यतीत करने हेतु चतुर्व्यूहवाद का ज्ञान उपयोगी तथा महत्त्वपूर्ण है। योगदर्शन में इसे चतुर्व्यूहवाद, बौद्ध दर्शन में चार आर्य सत्य तथा सांख्य योग में इसकी चर्चा जरा, मृत्यु, रोग तथा जन्म के रूप में मिलती है। मनुष्य जीवन का अन्तिम लक्ष्य आत्मसाक्षात्कार अर्थात् मोक्ष या कैवल्य की प्राप्ति करना है। पातंजिल योग सूत्र में निरूपण किया गया है कि चतुर्व्यूहवाद (हेय, हेय हेतु, हान और हानोपाय) अर्थात् दृष्ट और दृश्य के संयोग से होने वाला दुःख और जब दुःख की निवृत्ति होती है तो कैवल्य प्राप्त होता है। सम्पूर्ण मानव जाति ने अपने सुख भोग हेतु कई चमत्कारिक व वैज्ञानिक साधन तो एकत्रित कर लिये किन्तु यही सब बन्धन का कारण है, यही समस्त दुःखों का कारण है यह सोच उसने नहीं रखी।

यह दुःख तीन प्रकार से उत्पन्न होते हैं—आध्यात्मिक, आधिभौतिक तथा आधिदैविक। मानव जाति इन तीनों दुःखों से सदा के लिए छुटकारा पाना चाहता है। यह केवल वर्तमान दुःखों से ही नहीं अपितु भविष्य में आने वाले दुःखों से भी छुटकारा पाना चाहता है। यह छुटकारा मोक्ष से सम्भव हो सकता है। यह ज्ञान और मोक्ष का मार्ग, योग के माध्यम से सम्भव हो सकता है। मोक्ष आत्मसाक्षात्कार से प्राप्त होता है और योग एक ऐसी साधना है जिससे आत्मसाक्षात्कार सम्भव है। कूट शब्द : चतुर्व्यूहवाद, हेय, हेयहेतु, हान, हानोपाय, दुःख, कैवल्य।

सम्पूर्ण मानव जाति अपने सुख भोगने हेतु नाना प्रकार के साधनों को एकत्रित कर रहा है, फिर भी वह संतोषी नहीं है। वर्तमान में समस्त संसार दुःख से भरा है और जो मनुष्य अपने

को सुखी अनुभव कर रहा है वह अज्ञान के कारण ऐसा अनुभव करता है। (सूनुता विद्यालंकार, योगदर्शन व्यासभाष्य के परिप्रेक्ष्य में, क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली, संस्करण 1995, पृ.86)

जिस सुख के लिये हम कितनी ही मेहनत, परिश्रम करते हैं, उससे सुख मिलता तो है किन्तु क्षणिक। उसका मूल रूप दुःख ही होता है। इस प्रकार इस सृष्टि का प्रथम सत्य दुःख ही है। इन समस्त मानव जीवन से सम्बन्धित घटनाओं को हमारे पूर्वज ऋषि मुनियों ने समझा, चिन्तन-मनन किया, समीक्षा की और इसका निष्कर्ष निकाला। मनुष्य जीवन का अन्तिम लक्ष्य है। मोक्ष की प्राप्ति और इस मोक्ष से ही समस्त बन्धनों और दुःखों को दूर किया जा सकता है। प्रकृति के मुख्य दो कार्य हैं—मनुष्य को भोग करना तथा अपवर्ग की प्राप्ति कराना। (श्री स्वामी ओमानन्द तीर्थ, पातंजल योग प्रदीप, गीताप्रेस गोरखपुर, संस्करण 2074 पृ.381)

दुःख शब्द का अर्थ व इसकी उत्पत्ति—दुःख का तात्पर्य उस अवस्था से है जिसमें स्थितियाँ प्रतिकूल होती हैं अर्थात् जब परिस्थितियाँ हमारे अनुसार नहीं घट रही हैं तो यह अवस्था दुःख कहलाती है। शास्त्रों में इसका उल्लेख 'प्रतिकूल वेदनीयं दुःखम्' (Dr. B.R. Sharma, Philosophical Foundation of Yoga, Sep. 2015, G.S. College of Yoga and Cultureal Synthesis, Keivalyadhama, Lonavla) के रूप में मिलता है। इसके विपरीत स्थिति की बात करें तो शास्त्र कहते हैं—'अनूकूलवेदनीयं सुखम्' (Dr. B.R. Sharma, ibid) अर्थात् जब परिस्थितियाँ आपके अनुसार घट रही हैं तो आपको सुख की अनुभूति होती है। जब हम जीवन में अपने

प्रत्येक कार्य की गतिविधियों को यांत्रिकी रूप से करते हैं तो हम स्वयं को नहीं पहचान पाते, जो हम है वास्तव में वह हमें दिखाई नहीं देता है। हालाँकि आज का जो वस्तुगत जगत है इसमें हमें कोई कष्ट देने वाली वस्तु नहीं है। अपितु आनन्द ही देती है क्योंकि, प्रत्येक कार्य को आसान कर दिया है। हमें दुःख तब होता है जब हम अपने कार्यों को किसी और पर या वस्तुओं पर थोप देते हैं और हम इस प्रकार दुःखद व्यवहार करने लगते हैं।

1. हेय (दुःख)–हेय का सामान्य अर्थ होता है दुःख, जो इस संसार में कोई भी मनुष्य नहीं चाहता है। महर्षि पतंजलि ने इस पर प्रकाश डालते हुये बताया है कि ‘हेयं दुःखमनागतम्’ (हरिकृष्णदास गोयन्दका, पातंजल योगदर्शन, गीताप्रेस गोरखपुर, सं. 2073, पृ.55) इस सूत्र में दो शब्द मिलते हैं। हेय और अनागतम अर्थात् हेय का अर्थ है दुःख और अनागतम का अर्थ है वह दुःख जो अभी आया नहीं है आने वाला है। अर्थात् भविष्य में आ सकता है, जो मनुष्य तीन प्रकार के दुःखों से ग्रस्त है वह इस प्रकार के दुःख से स्वतंत्र होना चाहता है। किन्तु ध्यान देने योग्य बात यह है कि जिन सांसारिक साधनों से वह सुख की अनुभूति करता है वही उसके लिये दुःख उत्पन्न करते हैं। महर्षि पतंजलि ने इसे सविवेक समझाया है।

‘परिणामताप संस्कार दुःखैर्गुणवृत्तिविरोधाच्च दुःखमेव सर्वं विवेकिनः’ (हरिकृष्णदास गोयन्दका, पूर्वोल्लेखित पृ.55) जिस वस्तु से हमें सुख की अनुभूति हो रही है उसके प्रति आसक्त होना स्वभाविक है। यह आसक्ति पत्नि, पुत्र, घर या कोई अन्य वस्तु के प्रति हो सकती है और यह स्थायी बनी रहे इसके लिए मनुष्य कई संघर्ष करता है और कभी-कभी अमानवीय कार्य भी कर देता है। इस प्रकार से वह संसार के वास्तविक स्वरूप को भी भूल जाता है। इस प्रकार वह ‘गुणवृत्तिविरोध’ अर्थात् सत, रज, तम (चन्द्रधर शर्मा, भारतीय दर्शन आलोचना और अनुशीलन, मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2013, पृ.151) यह त्रिगुण जो सतत् परस्पर घूमते रहते हैं। इन गुणों के प्रभाव से मनुष्य अपनी सम्पत्ति को बनाये रखना चाहता है

एवं सही या गलत किसी भी प्रकार से वह अपनी बाधाओं को दूर कर सामने वाले को या तो परेशान करेगा या किसी कार्य हेतु बाध्य करेगा। इन सबसे ही उसके कर्माशय बनते हैं। जिसके कारण धर्म और अधर्म का रूप संचित हो जाता है और यही भविष्य में दुःख को जन्म देते हैं। महर्षि पतंजलि ने भूत और वर्तमान के दुःखों को हेय की श्रेणी में नहीं रखा है, इन्होंने सांसारिक सुखों को हेय की श्रेणी में रखा है। महर्षि पतंजलि कहते हैं कि भूत और वर्तमान के दुःखों पर आपका कोई नियंत्रण नहीं है। किन्तु भविष्य में आने वाले दुःखों को किन्हीं उपायों के माध्यम से उन्हें रोका जा सकता है। (चन्द्रधर शर्मा, पूर्वोल्लेखित, पृ.151) इसी को हेय कहा गया है।

2. हेय हेतु (दुःख का कारण)–किसी भी समस्या का समाधान तब तक नहीं हो सकता, जब तक उसका कारण न पता चल जाये। जैसे किसी भी बुखार को तब तक ठीक नहीं किया जा सकता जब तक उसका मूल कारण न पता चल जाये। इसी प्रकार दुःख को तब तक समाप्त नहीं किया जा सकता जब तक उस दुःख का कारण (हेय हेतु) का पता न चल जाये। भारतीय दर्शनों में दुःख का कारण अविद्या, अविवेक, मिथ्याज्ञान आदि को समझा जाता है। विभिन्न दार्शनिकों ने अविद्या को भी अपने-अपने तरीके से समझाया है। जैसे भगवान बुद्ध ने ‘प्रतीत्यसमुत्पाद’ (हेन्द प्रसाद सिन्हा, पूर्वोल्लेखित, पृ.257) के आधार पर दुःख के कारण की व्याख्या की है। महर्षि पतंजलि ने दुःख का कारण ‘दृष्टदृश्योः संयोगो हेय हेतुः’ दृष्ट और दृश्य के संयोग को बताया है। दृश्य और दृष्ट का संयोग अर्थात् प्रकृति और पुरुष का एक हो जाना, जड़ और चेतन की एकरूपता। पुरुष को दृष्ट की संज्ञा तब मिलती है जब वह प्रकृति के साथ जुड़ जाता है। महर्षि पतंजलि ने दृष्ट से पहले दृश्य का वर्णन किया है (हरिकृष्णदास गोयन्दका, पूर्वोल्लेखित पृ.55) क्योंकि यही पुरुष को सर्व प्रथम भोग कराती है और फिर अपवर्ग कराती है। दृश्य का वर्णन मिलता है कि प्रकाश, क्रिया और स्थिति जिसका स्वरूप है अर्थात् इन तीनों के बिना कुछ भी संभव नहीं चाहे वह जीव हो या निर्जीव। प्रकाश का मूल है सत्त्व, क्रिया का मूल है रजस और स्थिति का मूल है तम। इन तीनों की साम्य अवस्था प्रकृति कहलाती

है। अर्थात् यही दृश्य का स्वरूप है। पाँच स्थूल भूत- पाँच तन्मात्रा, पाँच कर्मेन्द्रिया, पाँच ज्ञानेन्द्रिया एवं मन बुद्धि और अहंकार ये सब (तेईस तत्व) प्रकृति के कार्य होने से उसके स्वरूप है। (हरिकृष्णदास गोयन्दका, पूर्वोल्लेखित पृ.56) तीनों गुण (सत, रज और तम) यह पुरुष के उद्देश्य मात्र के लिये है अर्थात् सांसारिक अनुभव हेतु। जब यह उद्देश्य पूर्ण हो जाता है, तो पुरुष अपवर्ग प्राप्त करता है। इस प्रकार पुरुष और प्रकृति का संयोग ही हेयहेतु कहलाता है।

3. हान (दुःख से मुक्ति) - अविद्या के उत्पन्न होने पर विवेकज्ञान या वास्तविक ज्ञान का अभाव हो जाता है। किसी भी पदार्थ के मूल स्वरूप का भान नहीं रहता है। हान के विषय में महर्षि पतंजलि कहते हैं 'तदभावात्संयोगा भावो हानं तद्वशेः कैवल्यम्' (हरिकृष्णदास गोयन्दका, पूर्वोल्लेखित पृ.60) अर्थात् जब विवेकज्ञान के माध्यम से अज्ञान या अविद्या का सर्वथा अभाव हो जाता है और अविद्या के कारण पुरुष और प्रकृति का संयोग हो रहा था उसमें भी कोई सम्बन्ध नहीं रहता तो जन्म-मरण जैसे समस्त दुःखों का अभाव हो जाता है। चित्त अपने कारण में विलीन हो जाता है।

4. हानोपाय (दुःख से मुक्ति प्राप्त करने के उपाय) - दुःख के कारण को समझने के पश्चात्, दुःख मुक्ति के उपाय की चर्चा करते हैं। इसको किस प्रकार प्राप्त किया जा सकता है। मोक्ष क्या है? इसको प्राप्त करने के साधन क्या है? इसके प्रति उत्तर में महर्षि पतंजलि ने चतुर्व्यूह के चौथे स्तम्भ का वर्णन करते हुये हानोपाय की व्याख्या की है 'विवेक ख्यातिरविप्लवा हानोपाय' (हरिकृष्णदास गोयन्दका, पूर्वोल्लेखित पृ.60) अर्थात् विवेक ख्याति का तात्पर्य है यर्थाथ ज्ञान, वास्तविक ज्ञान, चित्त और पुरुष के भेद का मूल ज्ञान हो जाना। इस प्रकार यह जानना कि 'पुरुष जड़ पदार्थ भी नहीं है और मन भी नहीं और चूँकि वह प्रकृति भी नहीं है इसलिए उसका किसी भी प्रकार का परिणाम असम्भव है।' (स्वामी विवेकानन्द, राजयोग, रामकृष्ण मठ प्रकाशन, नागपुर, संस्करण 2010, पृ.171)

होता है इस आत्मसात्कार से विवेकख्याति नामक जो वृत्ति बनी हुई है, पूर्व में समस्त वृत्तियों का निरोध इस विवेक ख्याति के द्वारा हो गया। किन्तु एक वृत्ति जो विवेकख्याति नामक है शेष रह जाती है और जब इसकी आसक्ति समाप्त हो जाती है तो यह पर वैराग्य कहलाता है। इस अवस्था को असम्प्रज्ञात समाधि बोलते हैं। इस स्थिति में मिथ्याज्ञान, अविद्या का अभाव हो जाता है यह पुनः विकसित नहीं होती है। यह अवस्था ही कैवल्य अर्थात् मोक्ष कहलाता है। इस मार्ग को हानोपाय कहते हैं।

पुरुष स्वयं चेतन है। बन्धनग्रस्त होना पुरुष का वास्तविक स्वभाव नहीं है। दुःख जैसा स्वरूप पुरुष का है ही नहीं। अविवेक के कारण पुरुष स्वयं को प्रकृति तथा त्रुटियों से अभिन्न समझ लेता है। तब वह प्रकृति से उत्पन्न दुःखों को स्वयं के दुःख समझकर कष्ट झेलने लगता है। अविद्या के कारण ही पुरुष स्वयं को शरीर समझने लगता है और शरीर को कष्ट होने पर वह उसे स्वयं दुःख समझने लगता है। अविद्या के कारण पुरुष स्वयं को प्रकृति का अंग समझने लगता है। यही बन्धन का मूल कारण है। जिस प्रकार एक संतान को दुःख होने पर उसके माँ-बाप दुःखी रहते हैं। तथा एक नौकर के अपमानित होने पर उसका मालिक स्वयं को अपमानित महसूस करता है। ठीक उसी प्रकार पुरुष, शरीर व प्रकृति के दुःखों को स्वयं का दुःख समझकर बन्धनग्रस्त हो जाता है। यह बन्धन मूल रूप से अवास्तविक है और पुरुष सदैव इस बन्धन से मुक्त होने के लिये प्रयासरत रहता है। इस बन्धन से मुक्ति हेतु महर्षि पतंजलि ने चतुर्व्यूहवाद (हेय, हेयहेतु, हान, हानोपाय) की संकल्पना दी है।

1 शोध छात्र, योग शिक्षा विभाग,
डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)
मो. 8602180520
2 शोध निर्देशक, योग शिक्षा विभाग,
डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)

विवेक ख्याति के माध्यम से पुरुष को जो आत्मसाक्षात्कार